गुरु हर राय साहिब
(1630–1661, गुरगद्दी 1644–1661)

गुरु हर गोबिंद साहिब के पाँच सुपुत्र और एक सुपुत्री थी। सबसे बड़े सुपुत्र बाबा गुरदिता जी के दो सुपुत्र थे– धीरमल्ल और हर राय। धीरमल्ल विश्वासघाती और अवज्ञाकारी निकला। उसका बादशाह औरंगजेब के दरबार में कुछ प्रभाव था और गुरु जी के शत्रुओं से मेलजोल भी। जब गुरु जी कीरतपुर आकर रहने लगे तो धीरमल्ल अपनी माता के साथ करतारपुर ही रहा और गुरु जी की सम्पत्ति और साथ ही, आदि ग्रंथ साहिब की बीड़ भी अपने कब्ज़े में कर ली। उसका ख़्याल था कि जब तक यह बीड़ उसके पास रहेगी, सिख उसे अपना धार्मिक नेता जानेंगे। इसी कारण, जैसा कि पिछले अध्याय में वर्णन किया जा चुका है, धीरमल्ल ने अपने पिता के देहान्त के बाद गुरु जी के निमंत्रण पर कीरतपुर आने से इन्कार कर दिया। गुरु हर गोबिंद साहिब ने धीरमल्ल के छोटे भ्राता हर राय जी को गुरगद्दी सौंप दी और स्वयं 3 मार्च 1644 को परम ज्योति में समा गये।

एक दिन बचपन में एक बाग में से गुजरते समय हर राय जी का खुला और ढीला चोला फूलों से उलझ गया और फूलों की पत्तियाँ झर कर धरती पर गिर गईं। यह देखकर उनके कोमल हृदय को पीड़ा पहुँची और उनकी आँखों में आँसू आ गये और इसके बाद उन्होंने दृढ़ निश्चय कर लिया कि वह सदैव अपने चोले को सम्भाल कर चला करेंगे और संसार में किसी भी चीज को कभी हानि नहीं पहुँचाएँगे। जब बड़े हुए तो यही संकल्प बनाये रखा। वह बहुत बार फरीद जी की बाणी की इन तुकों का प्रयोग किया करते :

"सभना मन माणिक ठाहण मूलि मचांगवा।
जे तउ पिरीआ दी सिक हिआउ न ठाहे कहीदा।"

(श्लोक शेख फरीद के, पृष्ठ 1384)

गुरु हर राय जी अत्यधिक उदारचित्त वाले थे। उनका भोजन बहुत सादा था, वह स्वादिष्ट भोजन की इच्छा नहीं करते थे। जो भी कोई कीमती उपहार उनके लिए आता, वह अपने अतिथियों पर खर्च कर देते। अपने दादा गुरु हर गोबिंद साहिब जी के आदेश के अनुसार उन्होंने बाइस सौ घुड़सवार वाली फौज की टुकड़ी रखी हुई थी। दोपहर के बाद वह शिकार के लिए भी जाया करते थे। वह शिकार के दौरान पकड़े गये कुछ जानवरों को खोलकर एक चिड़ियाघर में संभालकर रखते। यह चिड़ियाघर उन्होंने अपने श्रद्धालुओं के मनोरंजन के लिए बनाया हुआ था। संध्या के समय वह दरबार सजाते और गुरबाणी का कीर्तन सुनते और फिर धर्म–उपदेश देते।

बादशाह शाहजहाँ के चार पुत्र थे– दारा शिकोह, शुजा मुहम्मद, औरंगजेब और मुराद बख्श। दारा शिकोह जो तख्त का वारिस था, अपने पिता को बहुत प्यारा था। औरंगजेब बहुत चालाक, मक्कार और स्वार्थी था और उसने तख्त पर बैठने का लक्ष्य बना रखा था। कहा जाता है कि उसने दारा शिकोह को एक स्वादिष्ट खाने में शेर की मूंछें मिलाकर खिला दीं जिसके कारण वह बहुत सख्त बीमार हो गया। सबसे अच्छे हकीमों का इलाज करवाया गया, पर कुछ लाभ न हुआ। चिंतित बादशाह ने हरेक देश से ज्योतिषी और भविष्यवाणी करने वाले धर्मात्मा पुरुषों को बुलाया, पर सब निष्फल रहा। सियाने इस नतीजे पर पहुँचे कि जब तक शेर की मूंछें दारा शिकोह के पेट में से नहीं निकाली जातीं, उसके बचने की कोई आशा नहीं। उनका विचार था कि अगर 14 छटांक त्रिफला और एक माशा लोंग बीमार को खिलाई जाए तो वह स्वस्थ हो जाएगा। बादशाह ने अपने राज्य में हर जगह इन चीजों की खोज करवाई, पर ये कहीं न मिलीं। आखिर, किसी ने बताया कि ये गुरु हर राय जी के भंडार में मिल जाएँगी। अपने दरबारियों की सलाह पर बादशाह ने यह ज़रूरी समझा कि गुरु साहिब के आगे अपने आप को झुका दें। और इस विचार के साथ उसने नीचे लिखा पत्र गुरु जी को लिखा :

"आपके बुजुर्ग पवित्र बाबा नानक जी ने बादशाह बाबर को राज्य बख्शा था, जिन्होंने मेरे शाही खानदान की नींव रखी। गुरु अंगद साहिब उसके बेटे बादशाह हिमायुं पर बहुत मेहरबान थे, और गुरु अमरदास साहिब ने मेरे दादा, बादशाह अकबर के रास्ते की बहुत–सी मुश्किलें दूर की थीं। मुझे बेहद

पछतावा और दुख है कि कि गुरु हर गोबिंद साहिब और मेरे में वे दोस्ताना रिश्ते कायम न रहे और अजनबी लोगों की दखलअंदाजी के कारण गलतफहमियाँ पैदा हो गई थीं। इसमें मेरा कसूर नहीं था। अब मेरा बेटा दारा शिकोह सख्त बीमार है। उसका इलाज आपके हाथ में है। अगर आप त्रिफला और लोंग जो आपके भंडार में है, प्रदान कर दें और साथ ही, अपनी आशीषें भी, तो आप मुझ पर हमेशा रहने वाला अहसान करेंगे।"

एक अमीर सरदार ने यह पत्र गुरु जी को कीरतपुर में जाकर दिया। गुरु जी ने पत्र लेते ही कहा, "सुनो, मनुष्य एक हाथ से फूल तोड़ता है और दूसरे हाथ से वह फूल भेंट करता है, पर फूल दोनों हाथों को एक जैसा खूबसूरत कर देते हैं। हालांकि कुल्हाड़ी चंदन के वृक्ष को काटती है, फिर भी चंदन उसको अपनी सुगन्धी दे देता है। सो, गुरु ने बुरे के बदले में अच्छा वापस करना है।" गुरु जी ने ज़रूरी दवाई भेज दी जिसे दारा शिकोह को खिलाया गया और वह तुरन्त और पूरी तरह अरोग हो गया। बादशाह के लिए खुश होना सहज ही था। उसने गुरु जी के विरुद्ध अपने सारे वैर भाव को भुला दिया, साथ ही उसने यह सौगन्ध खाई कि फिर कभी भी गुरु जी को नाराज़गी का अवसर नहीं देगा।

एक दिन गुरु जी घोड़े पर सवार होकर जाते हुए एक स्थान पर रुक गये और एक गरीब स्त्री के घर का दरवाजा खटखटाया और कहा, "हे नेक औरत, मुझे बड़ी भूख लगी है, जो रोटी आपने बनाई है, ला दो।" उस स्त्री ने खुशी में उछलते हुए एक सूखी–सी रोटी लाकर अर्पण की, जिसे गुरु जी ने घोड़े पर बैठे–बैठे ही, बिना हाथ धोये खा लिया और उसके स्वाद का बहुत आनन्द लिया। तब गुरु जी ने उस स्त्री पर अपनी मेहर की और उसका जन्म–मरण का जंजाल काट दिया। अगले दिन, उसी समय सिखों ने बहुत ही स्वादिष्ट भोजन बड़ी स्वच्छता का ध्यान रखते हुए तैयार किये और गुरु जी के पास छकने के लिए लेकर आए। गुरु जी हँसे और कहा, "भले सिखों ! मैंने उस औरत के हाथ का भोजन खाया था, क्योंकि वह पवित्र जीवन वाली थी। यह भोजन जो तुमने पुरातन तौर–तरीके का ध्यान रखते हुए तैयार किया है, मुझे प्रसन्न करने वाला नहीं।" सिखों ने पूछा, "सच्चे पातशाह, कल आपने घोड़े पर बैठे–बैठे ही उस वृद्ध स्त्री जिसे आप जानते नहीं थे, के हाथ से लेकर रोटी खा ली। वह कोई पवित्र जगह नहीं थी और रोटी भी हर तरह से अशुद्ध थी। आज हम आपके लिए भोजन तैयार करके लाये हैं, यह किसी भी तरह से अशुद्ध नहीं है, फिर भी आपने इसे अस्वीकार कर दिया है। कृपा करो और हमें इसका कारण समझाने की मेहर करो।" गुरु जी ने उत्तर दिया, "उस स्त्री ने अपने गहरे पसीने की कमाई में से बहुत ही प्रेम और श्रद्धा से मेरे लिए रोटी बनाई थी। इसलिए वह भोजन बहुत पवित्र था और मैंने खा लिया। गुरु प्रेम का भूखा है, स्वादिष्ट भोजन का नहीं। अकाल पुरुख के लिए प्रेम के लिए भी कोई नियम नहीं होता। यह मनुष्य के खाने वाला भोजन नहीं जो अकाल पुरुख को प्रसन्न करता है, यह मनुष्य का अकाल पुरुख के लिए भक्तिभाव है, जो उसे स्वीकार होता है।"

गुरु जी प्रचार के सफ़र पर :

गुरु अर्जन देव जी ने अपने श्रद्धालुओं का संगठन शान्तमयी मर्यादा के अनुसार लगभग मुकम्मल कर दिया था और गुरु हर गोबिंद साहिब के समय सिख धर्म ने एक फौज का अंग भी साथ जोड़ लिया। पंगत और संगत की मर्यादा और आदि–ग्रंथ साहिब के लिए श्रद्धा पर जोर देने के अलावा गुरु हर राय साहिब ने पंजाब के मालवा और दुआबा इलाकों में लम्बे–चौड़े प्रचार दौरे किए। इन इलाकों में सिख धर्म को प्रफुल्लित होने के अच्छे अवसर मिले। गुरु जी ने पंजाब के जमींदार परवारों को खास तौर पर सिख धर्म में प्रवेश दिलाया। ये परिवार उस समय लोगों के कुदरती नेता समझे जाते थे।

अपने एक दौरे पर गुरु जी मुकन्दपुर जो आजकल जालंधर जिले में है, में ठहरे। वहाँ उन्होंने अपनी इस यात्रा की स्मषति में बाँस की एक कोंपल जमीन में रोपी जो आज भी एक शानदार वृक्ष के रूप में कायम है। वहाँ से गुरु जी मालवा गये और नथाना के करीब सरोवर पर आये, जहाँ गुरु हर गोबिंद साहिब ने युद्ध लड़ा था। वहाँ महाराज कबीले के दो भाई– काला और करम चंद गुरु जी के पास शिकायत करने आये कि कौड़ा कबीले के लोग उन्हें अपने बीच बसने नहीं देते। गुरु जी ने मामले को

प्रेम–प्यार से निपटाने की कोशिश की, पर जब कौड़ा कबीले के लोगों ने गुरु जी की बात सुनने से इन्कार कर दिया तो गुरु जी ने महाराज भाइयों को कुछ जमीन जबरन कब्ज़ा करके उस स्थान पर बस जाने में सहायता की। गुरु जी नथाना कुछ समय तक रहे और लोगों को उपदेश दिया। काला और उसके मित्र गुरु जी के दर्शन करने के लिए आते रहे। गुरु साहिब जी के उपदेश सुनकर लोगों ने कब्रिस्तानों और श्मशानों की पूजा करना छोड़ दिया और अकाल पुरुख की सीधी–सादी पूजा में लग गये।

एक दिन काला अपने भतीजे–भतीजी, जिनका नाम संदली और फूल था और जिनका पिता गुरु हर गोबिंद साहिब जी के समय युद्ध में मारा गया था, को संग लेकर गुरु जी के दर्शन करने आया। जब बच्चे गुरु जी के सामने आये तो फूल जो पाँच वर्ष का था, अपने नंगे पेट को हाथों से ढोल की तरह पीटने लगा। जब गुरु जी ने इसका कारण पूछा तो काला ने बताया कि बालक भूखा है और खाने के लिए मांगता है। गुरु जी ने बालक पर दया की और वचन दिया, "यह बालक महान, प्रसिद्ध और धनवान बनेगा। इसके वंश के घोड़े जमना नदी तक पानी पियेंगे, ये कई पीढ़ियों तक राज्य करेंगे और जितनी ये गुरु घर की सेवा करेंगे, उतना ही मान पायेंगे।" जब काला घर पहुँचा और उसकी पत्नी ने गुरु जी की कृपा–दृष्टि के बारे में सुना तो उसने अपने पति को जोर दिया कि वह अपने बेटों को भी गुरु जी के पास ले जाए। साथ ही, उन्हें यह सिखाये कि वे भी गुरु जी के सम्मुख अपने–अपने नंगे पेट को बजायें, अपने आप को भूखा दर्शाने के लिए। जब काला और उसके अपने पुत्र गुरु जी के सम्मुख पहुँचे तो उसने बता दिया कि वह अपनी पत्नी के जोर डालने पर अपने बच्चों को लेकर आया है। गुरु जी ने कहा, "इन बच्चों के माता–पिता जीवित हैं, पर साथ ही ये अपनी जमीन पर खेती करेंगे, अपनी मेहनत का फल खायेंगे, कोई लगान नहीं देंगे और किसी के आश्रय के मोहताज नहीं होंगे।" यह भविष्यवाणी सत्य सिद्ध हुई और उनका वंश बाईस गाँवों, जिन्हें 'बाहिया' कहते हैं, का मालिक बना। फूल के छह बेटे हुए। सबसे बड़े तिलोक सिंह के वंश में नाभा और जींद के राजा हुए। दूसरे पुत्र राम सिंह की औलाद में महाराजा पटियाला था। ये तीन फूल के राजे या 'फुलकियाँ' के प्रमुख कहलाते थे। भारत जब 1947 में स्वतंत्र हुआ तो इन्हें और अन्य सैकड़ों रियासतों को भारत सरकार ने अपने में शामिल कर लिया।

गुरु जी को जब विश्वास हो गया कि मसन्द प्रथा बिलकुल बिगड़ गई है तो उन्होंने मसन्दों की जगह 'बख्शीशां' अर्थात प्रचार–केन्द्र स्थापित किये। छह केन्द्रों के प्रमुख थे– शाह साहिबा, संगता, मिहां साहिब, भगत भगवान, भगत मल्ल और जीत मल्ल। भगत भगवान को पूरब में प्रचार कार्य सौंपा गया, जहाँ उसने अपने सेवकों के साथ 360 गद्दियाँ(केन्द्र) सारा काम काज चलाने के लिए कायम कीं। कैथल और बागड़ियाँ के भाई परिवारों को जमना और सतलुज नदियों के बीच का इलाका प्रचार कार्य के लिए सौंपा गया। भाई फेरू को ब्यास और रावी नदियों के बीच के इलाके की जिम्मेदारी दी गई। एक अन्य केन्द्र पंजाब के केन्द्रीय जिलों में कायम किया गया। भाई आरू, सेवादार, नैकदास, दुर्गा चंद और सुथराशाह गुरु जी के समय महत्वपूर्ण प्रमुख थे जिन्होंने कश्मीर में प्रचार कार्य किया।

गुरु जी, उनका सुपुत्र रामराय और मुगल बादशाह :

बादशाह शाहजहाँ ने अपने सबसे बड़े पुत्र को अपने पास रखा। दूसरे पुत्र शुजाह मुहम्मद को बंगाल का गवर्नर बना दिया। तीसरा, औरंगजेब दक्खिन का गवर्नर नियुक्त हो गया और मुराद बख्श को गुजरात का सूबा मिला। इन पुत्रों की लालसा पूरी नहीं हुई थी और हर कोई बेसब्री से तख्त पर बैठने का इन्तजार कर रहा था। इन सबने अपने–अपने इलाकों में बहुत सारा धन और फौज जमा कर ली थी। जब शाहजहाँ बीमार हो गया और उसके स्वस्थ होने की सूरत नज़र नहीं आ रही थी, तो भाइयों में तख्त पर बैठने की जंग छिड़ गई। दारा शिकोह ने शुजाह मुहम्मद के विरुद्ध राजा जय सिंह को भेजा और जोधपुर के राजा जसवंत को दक्खिन की ओर। जय सिंह ने शुजाह मुहम्मद को हरा दिया लेकिन, औरंगजेब और मुराद की इकट्ठी फौजों ने राजा जसवंत सिंह को वापस लौट जाने के लिए विवश कर दिया। इस पर औरंगजेब ने बदला लेने की तैयारी की और बादशाही की बागडोर अपने हाथ में लेने की कोशिश की। दारा शिकोह खूब शानो–शौकत से औरंगजेब का मुकाबला करने के लिए चला और चम्बल नदी के निकट सामुगढ़ में अपने कैम्प गाड़ लिये। जल्द ही, औरंगजेब अपनी और मुराद की फौजों की अगुवाई करता हुआ

आ पहुँचा और घमासान युद्ध हुआ। औरंगजेब दारा के कई प्रमुखों को पकड़ लेने में सफल हो गया। दारा स्वयं रणक्षेत्र में से भाग खड़ा हुआ। औरंगजेब आगरा पहुँचा और उसने अपने पिता और अपने भाई मुराद को कैद कर लिया और फिर, दिल्ली की ओर चल पड़ा। दारा लाहौर की ओर भाग गया।

दारा प्रसिद्ध सांई मियां मीर का श्रद्धालू था जिससे उसने गुरु जी की महिमा सुन रखी थी और दारा की जान भी गुरु जी द्वारा भेजी गई दवाइयों की वजह से बची थी। इन परिस्थितियों के कारण, दारा के मन में गुरु जी के प्रति बहुत आदर–सम्मान था। जब से दारा पंजाब का गवर्नर बना, बादशाह और गुरु जी के बीच अच्छे सम्बन्ध बने हुए थे। शाहजहाँ ने हिंदू मंदिरों के विरुद्ध हुक्म दिया हुआ था, पर सिखों के धार्मिक स्थानों को इस हुक्म से बरी रखा था।

दारा शिकोह जब लाहौर जा रहा था तो संयोग से गुरु जी गोइंदवाल आए हुए थे। वह गुरु जी से मिला। बहुत सारे लेखक गुरु जी की तरफ से दारा को दी गई सहायता के बारे में काल्पनिक व्याख्या देते हैं। दारा ने गुरु जी से किस तरह की सहायता मांगी या गुरु जी ने दारा को दी, यह एक बड़ा प्रश्न है। उसके पास सारा शाही खजाना था, उसके जरनैल उसके साथ थे और हजारों आदमियों की फौज भी। उसने लाहौर पहुँचकर कुछ ही दिनों में बीस हजार आदमी अपनी फौज में भर्ती कर लिए थे। उसके पास सबकुछ था, पर एक बहादुर दिल का अभाव था, जो रणक्षेत्र में डटकर लड़ सके। वह रणक्षेत्र में से भाग आया था और आखिर, एक पठान, जिसने उसके साथ विश्वासघात किया, की मार्फत पकड़ा गया। उसे दिल्ली ले जाया गया और उसका कत्ल कर दिया गया।

दिल्ली के तख्त पर अपना स्थान पक्का कर लेने के बाद औरंगजेब ने हिंदुओं के विरुद्ध जेहाद शुरू कर दिया। दारा की मौत के बाद गुरु जी के दुश्मनों को औरंगजेब के मन में ज़हर भरने का अवसर मिल गया कि गुरु जी ने बादशाह के विरुद्ध दारा की सहायता की थी। इस पर औरंगजेब ने गुरु जी को दिल्ली में उसके सामने पेश होने का हुक्म दिया। गुरु जी ने प्रतिज्ञा की हुई थी कि वे औरंगजेब से नहीं मिलेंगे। सो, अपनी जगह गुरु जी ने अपने बड़े सुपुत्र रामराय को दिल्ली भेजा, साथ ही यह आदेश दिया कि वह गुरु साहिबान की दैवी शक्ति पर भरोसा रखे, किसी तरह अपने धर्म के पवित्र उसूलों का उल्लंघन न होने दे और अपने बारे में वचन और कार्य अकाल पुरुख का ध्यान रखकर करे, ऐसा करने पर सब कुछ सफल होगा।

जब बादशाह को बताया गया कि गुरु जी स्वयं नहीं आए, पर उन्होंने अपने बेटे को भेजा है तो उसने सोचा कि अगर गुरु जी की आजमाइश लेने का मंतव्य गुरु जी के बेटे से पूरा न हुआ तो वह गुरु जी को स्वयं आने के लिए बुला भेजेगा। कहा जाता है कि रामराय ने बेहतर करामातें दिखाईं। बादशाह ने उसे पहनने के लिए ज़हर भरे वस्त्र भेजे, पर उन्हें पहनने से उस पर कुछ भी असर न हुआ। एक मुलाकात के समय, एक गहरे कुएँ के मुँह पर एक चादर बिछा दी ताकि जब रामराय को उस पर बैठने के लिए कहा जाएगा तो वह कुएँ में गिर जाएगा। चादर बिलकुल अडिग रही और रामराय करामाती तौर पर बचा रहा। बादशाह को दिल्ली में बैठे–बैठे मक्के के दर्शन कराये गये। ऐसी श्रेष्ठ करामातें दिखाने के बाद औरंगजेब को रामराय की शक्तियों पर लगभग यकीन हो गया और उसने उससे मित्रता कर ली। तब एक आखिरी सवाल उठा। काज़ियों ने रामराय से पूछा, "रामराय तेरे गुरु नानक ने इस्लाम के खिलाफ लिखा है। एक जगह उसने कहा है :

मिटी मुसलमान की पेड़ै पई कुमिआर।
घड़ि भांडे इटा कीआ जल्दी करे पुकार।

(आसा की वार, महल्ला 1, पृष्ठ 466)

इसका क्या अर्थ है?

रामराय ने औरंगजेब की तरफ से अपने लिए इतनी इज्ज़त जीत ली थी कि वह शायद उसे नाराज नहीं करना चाहता था और चलते समय गुरु पिता के आदेश कि अपने धर्म के पवित्र उसूलों से ज़रा भी पीछे नहीं हटना, को भूल गया। सो, बादशाह को खुश करने के लिए रामराय ने उत्तर दिया, "शहंशाह, गुरु नानक जी ने लिखा था [1] – मिट्टी बेईमान की अर्थात जिसका ईमान नहीं, मुसलमान की मिट्टी कुम्हार

की मिट्टी के ढेले में पड़ने का नहीं। अनजान लोगों ने इस तुक के मूल पाठ को बिगाड़ दिया है, और आपके और
मेरे धर्म की बदनामी की है। बेईमानों के मुँह दोनों जहानों में काले किये जाएँगे, मुसलमानों के नहीं।" सारे मुसलमान काज़ी इस उत्तर को सुनकर खुश हो गये। तब बादशाह ने रामराय को एक प्रशस्ति पत्र प्रदान किया और दरबार को खत्म किया।

दिल्ली के सिखों ने तुरन्त एक सज्जन को कीरतपुर भेजा जिसने गुरु जी को बताया कि रामराय की दिल्ली में शानो–शौकत से आवभगत हुई और उसने कौन–कौन–सी करामातें दिखलाईं। सन्देश लाने वाले सज्जन ने यह भी विस्तार से बताया कि रामराय ने किस तरह गुरु नानक साहिब जी की एक तुक को बादशाह को खुश करने के लिए बदल दिया। गुरु जी को गुरु नानक साहिब जी का निरादर सुनकर बड़ा कष्ट हुआ और उन्होंने कहा कि **कोई भी प्राणी गुरु नानक साहिब के शब्दों को बदल नहीं सकता और 'जिस मुँह ने ऐसा करने का दुःसाहस किया है, उसे मैं कभी भी देखना पसन्द नहीं करुँगा।'** गुरु जी ने फैसला कर दिया कि रामराय गुरगद्दी के योग्य नहीं। उन्होंने इसकी पुष्टि की कि "गुरगद्दी एक शेरनी के दूध की तरह है जिसको केवल सोने के बर्तन में रखा जा सकता है। केवल वही इसके लायक है जो अपना जीवन इसके लिए अर्पण कर देने के लिए तैयार है।"

दिल्ली में कुछ समय रहने के बाद रामराय ने कीरतपुर जाने और अपने गुरु पिता को यह विश्वास दिलाने का निश्चय किया कि वह उसके बारे में लिए गये फैसले को बदल दें। उसने अपना कैम्प कीरतपुर के निकट लगा लिया और गुरु जी को पत्र लिख भेजा कि वे उसे मिलने की आज्ञा दें। उसने माना कि उसे अपने पापों का पष्चाताप है और इसे क्षमा कर दिए जाने की इच्छा ज़ाहिर की। गुरु जी ने उत्तर दिया, "रामराय, तुमने मेरे हुक्म की अवज्ञा करने पाप का किया है। तू एक पवित्र पुरुष बनने की इच्छा कैसे कर सकता है ? तू जिधर तेरा मन चाहे, चला जा। मैं तेरे द्वारा विश्वासघात किये जाने के कारण तेरा मुँह कभी नहीं देखूँगा।"

गुरु जी ने अपना अन्त निकट आता जानकर सिख संगत को दीवान सजाने के लिए कहा। उन्होंने अपने छोटे सुपुत्र हर किशन जी जो केवल पाँच वर्ष की आयु के थे, को गुरु नानक देव जी की गद्दी पर बिठा दिया। फिर एक नारियल और पाँच पैसे चढ़ाकर उनकी तीन परिक्रमायें कीं और उनके मस्तक पर गुरगद्दी का तिलक लगवाया। सारी संगत ने उठकर गुरु हर किशन जी के सम्मुख माथा टेका। गुरु हर राय साहिब जी ने सभी सिखों को आदेश दिया कि वह गुरु हर किशन जी को उनका ही स्वरूप समझें, उन पर श्रद्धा रखें और इस तरह वे मुक्ति पा सकेंगे।

गुरु हर राय साहिब ने आँखें मूंद लीं और 6 अक्तूबर 1661 को परम ज्योति में समा गये।

1. यह भी कहा जाता है कि रामराय ने औरंगजेब को बताया कि गुरु नानक जी का यह मतलब नहीं था कि मुसलमान की मिट्टी। असल में गुरु जी का भाव 'बेईमान' से था। इस तरह रामराय ने मूल तुक को नहीं बदला, केवल उस तुक के अर्थ ही बदले थे।